Shodh International: A Multidisciplinary International Journal (In Hindi)
Vol. 5, Issue 3 – 2020
ISSN: 2581-3501

प्राचीन भारतीय शिक्षा में लैंगिक विमर्श

डॉ. अनुराधा पालीवाल[1]

[1]*आर्य महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, मालवीय नगर, अलवर।*

सृष्टि के आरम्भ में जब मनुष्य सभ्यता और संस्कृति की अंगुली पकड कर चलने से पहले उस अंगुली को पहचानने की कोशिश में था, उस समय मनुष्य के दो ही रूप थे, नर तथा मादा। विवाह संस्था नहीं थी, नारी को अधिक सम्मान प्राप्त था। इसका प्रमुख कारण शायद नारी का संतति में वृद्धि करना रहा होगा। धीरे-धीरे मनुष्य तरक्की के क्रमिक सोपानों का आरोहण करता गया। चार हजार ईसा पूर्व के आसपास जबकि मानव पत्थर युग से आगे निकल कर पशुपालन व खेती बाडी करने लगा तो उसमें जाना-अनजाना, अपना-पराया पहचानने व संग्रहण की प्रवृति का विकास हुआ।

कृषि युग ने स्त्री-पुरूष को एक विशेष बंधन में बांधा जो कि विवाह बंधन कहलाया। क्रमशः कार्य का बँटवारा भी हुआ। स्त्रियों को घर व पुरूषां को बाहर का क्षेत्र मिल जाने के कारण बाह्र संसार में पुरूषों की पहचान अधिक महत्वपूर्ण हो गई और घर में ही घिर जाने के कारण महिलाओं की स्थिति गौण होने लगी, यही वह संधि स्थल था, जहाँ पूर्व का मातृसत्तात्मक अधिपत्य, पितृसत्तात्मक में परिवर्तित हो गया। प्राचीन काल की शिक्षा में भारतीय समाज में लिंग असमानता का मूल कारण इसकी पितृसत्तात्मक व्यवस्था में निहित है।

भारतीय समाज की सदियों पुरानी सांस्कृतिक घटना है महिलाओं का शोषण पितृसत्तात्मकता ने अपनी वैधता और स्वीकृति हमारे धार्मिक विश्वासां, चाहे वो हिन्दु मुस्लिम हो या किसी अन्य धर्म से ही क्यों न हो प्राप्त की है।

स्त्री समाज की नींव है, इसलिए वह समाज का महत्वपूर्ण घटक भी है जिसके ऊपर समाज की उन्नति, प्रगति निर्भर है। स्त्री की सामाजिक स्थिति तत्कालीन समाज की आध्यात्मिक सामाजिक, धार्मिक व भौतिक उन्नति का दर्पण है। स्त्रियों की स्थिति का आकलन भी इसी उन्नति के आधार पर किया जा सकता है।

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

भारतीय समाज के इतिहास पर नजर डाली जाए तो स्त्री के सामाजिक जीवन के अनेक चित्र उभरते हैं। जहाँ नारी महिमामयीं देवी दुर्गा है तो दूसरी ओर पुरूष प्रधान समाज के जूतों तले कुचली जाती करूण चित्कार भी है।

त्रेता युग की रेणुका (ऋषि जमदग्नि की पत्नी व परशुराम की माता), अहल्या (ऋषि गौतम की पत्नी) तथा सीता (राजा राम की पत्नी) तीनों नारियों में भिन्नता होते हुए भी ये एक अर्थ में समान थी। ये नारियाँ साधारण नहीं थीं, शाक्तिसम्पन्न पुरूषों की प्रतिष्ठित पत्नियाँ थी व इतना होने पर भी इनकी देह यदि किसी कारण लांछित (जिसका कोई प्रमाण मौजूद नहीं था) हुई भी हो तो इसका प्रायश्चित उन्हे जीवन का मोल चुका कर ही करना पडा था। जब समाज की शीर्षस्थ स्त्रियों की यह दशा थी तो सर्वसाधारण औरत का भला क्या हाल रहा होगा ?

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति प्राचीन या वैदिक काल में सुदृढ़ थी इससे पूर्व सिन्धु सभ्यता में लैंगिक शिक्षा का कोई प्रमाण प्राप्त नहीं है। वैदिक काल में स्त्री को सभा और समिति जैसी सामाजिक संस्थाओं में समान प्रतिनिधित्व मिलता था। अपाला और लोपामुदा जैसी विदूषी स्त्रियों ने वेदों की रचना में भी योगदान दिया।

वैदिक काल में अधिकार सम्पन्न स्त्री के सभी आदर्श रूप देखे जा सकते है। स्त्रियों के सामाजिक उत्थान की दृष्टि से वेदकालीन समाज को 'स्वर्णिम युग' कहा जाय ता अतिश्योक्ति नहीं होगी।

वेदकालीन समाज में स्त्री को उच्च पद पर आसीन किया है तथा स्त्रियो ंके अधिकारां के प्रति पर्याप्त उदार एवं सजग रहा है। इस युग में नारी प्रत्येक क्षेत्र में पुरूषों के समकक्ष थी। स्त्रियों को बौद्धिक प्रतिभा अर्जन करने और उसे प्रगट करने का अधिकार था। स्त्री पुरूष की अर्धांगिंनी मानी जाती थी। भावनात्मक धरातल पर ही नहीं, व्यवहारिक क्षेत्र में भी स्त्रियों को सम्मानजनक स्थान प्राप्त था।

ऋग्वेद में 27 ब्रहमवादिनी स्त्रियों का उल्लेख मिलता है। सुलभा, लोपामुदा, मैत्रेयी, घोषा, विश्वावरा, सूर्या, अदिति इंद्राणी, उर्वशी आदि स्त्री ऋषिकाएँ हुई हैं जिन्होंनें वेदों के गुढ़ रहस्यां का साक्षात्कार किया था। ब्रहमवादिनी स्त्रियाँ अर्थात् वे छात्राएँ जो अधिकांशत तत्व ज्ञान में रत रहती है। स्त्रियाँ संगीत में भी निपुण थी। स्त्रियों का भी पुत्रों के साथ उपनयन

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

संस्कार (विद्या आरंभ पूर्व गुरू के पास ले जाना) किया जाता था। शिक्षा धार्मिक दृष्टिकोण के साथ प्रदान की जाती थी। विवाह में पुत्री की सहमति-असहमति ली जाती थी। क्षत्रीय समाज में स्वयंवर की प्रथा थी। बाल विवाह प्रथा, दहेज जैसी कोई प्रथा नहीं थी। पुनर्विवाह का विधान था। ऐसी स्त्रियों की 'पुनर्भू' कहते है।

हालांकि वैदिक समाज व्यवस्था पितृसत्तात्मक थी। पिता घर का प्रधान होता था स्त्री का उसके घर में स्थान सर्वोपरि था उसे परिवार का प्रमुख अंग माना गया। धार्मिक क्षेत्र में पत्नी को समानाधिकार प्राप्त थे। अर्थर्ववेद में स्त्रियों को 'यज्ञिय' (यज्ञ की अधिकारिणी) कहा गया है। पति-पत्नी के आपसी सम्बन्ध सौहार्दपूर्ण, प्रेमाधारित, द्विपक्षीय था। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि वैदिक समाज में स्त्री को सर्वोच्च स्थान व समानाधिकार प्राप्त थे। स्त्रियाँ गतिशील और स्वाधीन थी और यही समतावादी समाज या जिसमें स्त्री पुरूष सम्बंध का आधार पारस्परिक आदान-प्रदान व अपने-अपने कार्यक्षेत्र में स्वतंत्र व्यवहार था। वैदिक काल स्त्री स्वातंन्त्रय व अधिकारों, सम्मान की दृष्टि से काफी उदार रहा। वैदिक काल नारी के उत्कर्ष की चरम सीमा थी।

आधुनिक युग का नारी मुक्ति आंदोलन जिस स्वतंत्रता का स्वपनिल संसार दिखा रहा है। वैदिक नारी को प्राप्त व सहज सुलभ थे। उत्तर वैदिक काल से मध्य युग तक परिवर्तित सामाजिक स्थिति नारी स्वतंत्रता के प्रतिकूल सिद्ध हुई एव नारी का अस्तित्व पुरूष की छाया में विलीन हो गया एवं यहीं से नारी के पतन का प्रारंभिक दौर आरंभ हुआ। स्त्रियों की निंदा की परंपरा का आरंभ उपनिषदों से हुआ। सामाजिक परिवर्तनां के बीच वेदकालीन स्वतंत्र नारी परतंत्रता की बेडियो में जकडने लगी।

किसी भी समाज की प्रगति का मानक केवल वहाँ का परिमाणात्मक विकास नहीं होना चाहिये समाज के विकास में प्रतिभगिता कर रहे सभी व्यक्तियों के मध्य उस विकास का समावेश भी होना जरूरी है। लैगिक आधार पर स्त्री के साथ भेद-भाव होता है। दो वर्ग स्त्री, पुरूष के साथ-साथ मानव जाति में तृतीय लिंग प्रकृति के इंसान भी उपस्थित हैं। सामान्यतः समाज में ऐसे इंसान के लिए किन्नर, हिजडा शब्द का प्रयोग किया जाता है। ये वो लोग होते हैं जो न तो पूर्णतः स्त्री होते है और न ही पूर्णतः पुरूष, कुछ विशेष अंगो एवं गुणसूत्रों का नियत अनुपात में विकास न हो पाने के कारण ये लोग सामान्य स्त्री व पुरूष की भांति जीवन नहीं जी सकते न ही गर्मधारण कर सकते हैं।

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

भारत की विभिन्न भाषाओं में किन्नर को-तेलुगु में नंपुसकुडु, कोज्जा या मादा, तमिल में थिरू नंगई, अरावनी, गुजराती में पवैय्य, पंजाबी में खुसरा, कन्नड में जोगप्पा एवं भारत के अन्य क्षेत्रो में छक्का, खोजा, किन्नर, हिजरा, नंपुसक, थर्डजैंडर, ट्रांसजेण्डर आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

किन्नर शब्द आधुनिक किन्नोर क्षेत्र के प्राचीन काल से निवास करने वाली जनजाति विशेष के लिए प्रयोग होता है। प्राचीन काल में साहित्य में किन्नर को तृतीय प्रकृति अथवा नपुंसक मानव के रूप में संबोधन किया गया है।

संस्कृत के विभिन्न प्राचीन ग्रन्थो मे लिंग के ज्ञान पर भी प्रकाश डाला गया है। प्राचीन भाषाविद् पाणिनिकृत 'अष्टाध्यायी' के खिल-भाग में लिंगानुशासन प्राप्त होता है। जिसमें स्त्री, पुरूष एवं किन्नर/ नपुंसक के भेद को स्पष्ट किया है-

स्तन केशवती स्त्री स्याल्लोमशः पुरूषः स्मतः।
उभयोरन्तंर यच्च तदभावे नपुंसकम्"

अर्थात् स्तन व केश वाली स्त्री कहलाती है तथा रोएंवाला पुरूष कहा जाता है जिसमें इन दोनों के भेद का अभाव हो वह नपुंसक अर्थात हिजडा कहलाता है।

इसी प्रकार प्राचीन जैन एवं बौद्ध साहित्य में भी किन्नर का वर्णन मिलता है। जैन दर्शन में कर्म को स्त्री और पुरूष वेद तथा नपुसंक वेद के रूप में सम्मिलित किया है।

रामायण काल में किन्नरों की प्रत्यक्ष उपस्थिति के प्रमाण वाल्मिकी कृत रामायण एवं तुलसीदास कृत रामचरितमानस में मिलते है।

बौद्ध साहित्य में किन्नर शब्द का प्रयोग सुत्तपिटक के अन्तर्गत विभानवत्यु में भी हुआ है। जिसमें कि पर्वतीय भाग में चिनाब के तट पर किन्नर रहा करते थे ऐसा कहा है।

किन्नरां के विभिन्न लक्षणो के आधार पर पौराणिक ग्रन्थों मे किंपुरूष एवं किंपुरूषी (किन्नर/ किन्नरी) का भी भेद स्पष्ट किया गया है।

रामचरितमानस मे श्रीराम की भक्ति के सम्बन्ध में उल्लेख है कि-

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

"पुरूष नपुंसक नारी वा, जीव चराचर कोई।
सर्वभाव भज कपट तजि, मोहि परम प्रिय सोई।।

अर्थात कोई भी जीव चाहे व स्त्री, पुरूष, नपुंसक, देव, दानव, मानव, तिर्यक आदि हो अगर वह संपूर्ण कपट त्याग कर मुझे भजता है (मेरी भक्ति करता है) वह मुझ प्रिय है।

महाभारत में किन्नर के रूप में शिखंडी तथ वृहन्नला (अर्जुन) का उल्लेख मिलता है। विविध पौराणिक एवं ऐतिहासिक प्रसंगो, व सन्दर्भो का सूक्ष्मता के साथ अध्ययन करने के पश्चात् यह तथ्य उभर कर सामने आता है कि आज समाज में उपेक्षित एवं हेय दृष्टि से देखे जाने वाले किन्नर समाज का इतिहास समृद्ध है। विशेष शिक्षा व्यवस्था तो किन्नरों के सन्दर्भ में दृष्टिगोचर नहीं है। फिर भी जीवन स्तर समृद्धता प्राचीन काल में किन्नरां की स्थिति को बेहतर बताती है। देवताओं के साथ उनका भी उल्लेख किया जाता है। जब समाज की संरचना में उच्च व निम्न वर्ग की संकल्पना थी उस दौर में भी किन्नरों का सम्बन्ध उच्च वर्ग के साथ देखने को मिलता है।

वर्तमान समय में लोक से भी इतर समझे जाने वाले किन्नर समाज को प्राचीन काल में शिष्ट एवं उच्च वर्ग के साथ देखा जाता था। इस प्रकार प्राचीन काल की शिक्षा में लैंगिक विमर्श (स्त्री, किन्नरों) के सन्दर्भ में स्त्रियों की शिक्षा का विशेष प्रावधान पुरूषो के समकक्ष ही था, स्त्रियाँ सभी अधिकारों को प्राप्त करती थी और सम्मानजनक जीवन पितृसत्तात्मक समाज व पारिवारिक व्यवस्था में व्यतीत करती थी।

किन्नरो का शैक्षिक सन्दर्भ उल्लेख का प्रमाण नहीं है। परंतु उनका इतिहास प्राचीन काल में समृद्ध रहा है। लोकतांत्रिक समाज का निर्माण एवं विकास के लिए विभेदो को समाप्त किया जाना आवश्यक है। वर्तमान की अपेक्षा प्राचीन काल में स्त्री व किन्नरों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति सम्मान जनक अवस्था में रही यह हमारे लिए सम्मान व गौरव की बात है कि हमारा इतिहास, विविध पौराणिक प्रसंगो व सन्दर्भो में लैगिक समानता को स्वीकार करता था। वर्तमान में यदि प्राचीन काल की नीति 'लोकतांत्रिक आदर्शो की रक्षा' को धारण कर लागू कर दिया जाए ओर समाज भी इसे स्वीकार करे तो स्त्री व किन्नर विमर्श की आवश्यकता ही नहीं होगी।

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

सन्दर्भ

1. कमलेश कटारियाः नारी जीवनः वैदिक काल से आज तक प्रकाशन-यूनिट ट्रेडर्स, जयपुर।
2. डॉ. रामशकल पाण्डेयः शैक्षिक निबन्धः भारत में स्त्री-शिक्षा (2013) प्रकाशन-श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा-2.
3. कपिल कुमार गौतमः भारतीय साहित्य के संदर्भ में किन्नरो का इतिहास एव मिथक की अवधारणा शोध धारा (ISSN) Dec. 2018, Vd. 4.
4. https://him.wikipedia.org. भारत में लैंगिक असमानता।
5. https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates, लैंगिक असमानता।

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.